मंथन क्रमांक 32

उपदेश, प्रवचन, भाषण और शिक्षा का फर्क

दुनिया में कोई भी दो व्यक्ति पूरी तरह एक समान नहीं होते, उनमें कुछ न कुछ अंतर अवश्य होता है। प्रत्येक व्यक्ति जन्म से मृत्यु तक निरंतर ज्ञान प्राप्त करता रहता है और दूसरों को शिक्षा भी देता रहता है। हर आदमी जीवन भर दाता भी रहता है और ग्रहणकर्ता भी। न कोई व्यक्ति सम्पूर्ण रुप से ज्ञानी हो सकता है न ही पूरी तरह ज्ञान शून्य। प्रत्येक व्यक्ति हर मामले मे दूसरे लोगों से निरंतर प्रतिस्पर्धा करता रहता है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में प्रवृत्ति और क्षमता के आधार पर आकलन करके उसे चार वर्गो में बांटा जाता है जिसे वर्ण कहते हैं। इन वर्गो में भी ब्राहमण हमेशा ज्ञान और शिक्षा देता हैं तथा शेष तीन वर्ण ब्राहमण से ज्ञान और शिक्षा ग्रहण करते हैं। उपदेश प्रवचन भाषण और शिक्षा देना मुख्य रुप से ब्राहमण का काम माना जाता है।

व्यक्ति की क्षमता का निर्धारण तीन आधारों पर होता हैः—1) जन्मपूर्व के संस्कार 2) पारिवारिक वातावरण 3) सामाजिक परिवेश। इस तरह प्रत्येक बालक को शिक्षा प्रदान करने में परिवार की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है और उनमें भी मां की अधिक । प्रत्येक व्यक्ति में उपदेश, प्रवचन,भाषण और शिक्षा का मिलाजुला समावेश होता है भले ही वह किसी भी वर्ण का हो। इसके बाद भी ब्राहम्ण वर्ण के लोगों में यह क्षमता कुछ विशेष होती है। ये चारों क्षमतायें एक दूसरे से इतनी मिली हुई होती है कि चारों को अलग अलग करना बहुत कठिन कार्य है फिर भी मैं इस कार्य को करने का प्रयास कर रहा हूँ। मैं स्पष्ट कर दूँ कि यह विषय मेरे लिए कठिन है किन्तु हमारी टीम ने कुछ सोच कर ही यह विषय मंथन के लिए निर्धारित किया है। मैं यह भी स्पष्ट कर दूँ कि मैं जो भी लिखता हूँ वह विषय हमारी टीम द्वारा घोषित होता है तथा उस विषय पर लम्बे समय तक आपस में विचार मंथन होने के बाद ही मैं लिखता हूँ। वह भी इस उददेश्य से कि कुछ नई 5बातें दूसरों तक पहुच जायें और मुझे तथा टीम के साथियों को भी कुछ नई जानकारी मिल जाये। चारों विषय एक समान दिखते हुए भी चारों में कुछ भिन्नतायें हैं।

उपदेश—— अपना अनुभव, मस्तिष्क या बुद्धिग्राहय, गुण तथा तर्क प्रधान, तत्व, गंभीर,, कथनी और करनी की एकरुपता तथा उपदेशक के अपने विचार होते है। उपदेशक का हर वाक्य सत्य होना चाहिये, स्पष्ट होना चाहिये , द्विअर्थी नहीं।

प्रवचन—— अपना अनुभव, हृदयग्राहय, कलाप्रधान , सुपाच्य, कथनी करनी में एकरुपता, तथा काल्पनिक प्रस्तुति होता है।

भाषण—— दूसरों का अनुभव, हृदयग्राहय कलाप्रधान सुपाच्य कथनी करनी में एकरुपता का अभाव, काल्पनिक तथ्य से जुडा होता है। सत्य असत्य से कोई मतलब नहीं।

शिक्षा—— दूसरों के विचार, मस्तिष्कग्राहय, विचारप्रधान , तथ्यात्मक सत्य, संक्षिप्त स्पष्ट होता है किन्तु शिक्षा देने वाले की कथनी करनी में एकरुपता आवश्यक नहीं है।

इसी तरह उपदेशक प्रवचनकर्ता भाषण देने वाला और शिक्षक की भी कुछ अलग अलग भूमिकाएं होती हैं, भले ही चारों का काम ब्राहम्ण प्रधान क्यों न हो। उपदेशक की यह विशेषता होती है कि वह उपदेश देते समय हाथ नहीं हिलाता न ही श्रोताओं की प्रतिकिया की अपेक्षा करता है। उसके चेहरे में उतार चढाव नहीं होता। निर्लिप्त भाव से विचार प्रकट करता है। अपने विचारों की स्थापना के लिए अन्य महापुरुषों का नाम नहीं जोडता और प्रायः उपदेशक का अपना मौलिक चिंतन होता है। उपदेश के समय श्रोता आमतौर पर या तो बहुत जल्दी उठ जाते है अथवा उन्हे नींद आने लगती है। उपदेशक इस बात से कभी प्रभावित नहीं होता। उपदेशक प्रश्नोत्तर अवश्य करता है और प्रश्नोत्तर से अपनी बात समझाता है। उपदेशक का जीवन स्वाभाविक होता है, कोई बनावट नहीं होती। उसका कोई व्यक्तिगत उददेश्य भी नहीं होता। प्रवचनकर्ता बिल्कुल भिन्न होता है। वह अपने शरीर के विभिन्न अंगों के माध्यम से श्रोता को प्रभावित करने का प्रयास करता है। वह श्रोताओं की प्रतिकिया की भी हमेशा समीक्षा करता रहता है। उसके प्रवचन में विभिन्न रसों का समावेश होता है तथा वह अपनी बात समझाने के लिए काल्पनिक और असत्य उदाहरण सत्य के समान बनाकर प्रस्तुत करता है। वह प्रश्नोत्तर के अवसर नहीं देता। जीवन उसका भी स्वाभाविक ही होता है किन्तु उसके प्रवचन के साथ उसका कुछ व्यक्तिगत उददेश्य भी जुडा होता है। भाषण देने वाला भी अपने पूरे शरीर के विभिन्न अंगों को सकिय रखता है तथा प्रतिकिया की बहुत चिंता करता है। भाषण देने वाले का अपना चिंतन नहीं होता बल्कि वह अन्य विचारको के चिंतन को मिलाकर कलात्मक तरीके से प्रस्तुत करता है। वह अपने भाषण में कई प्रकार के रसों का समावेश करता है तथा उसका व्यक्तिगत उददेश्य भी निहित होता है। वह प्रश्नोत्तर का सहारा नहीं लेता। वह अपनी बात कहता है दूसरों की सुनना नहीं चाहता। उसकी कथनी करनी में आसमान जमीन का फर्क होता है। शिक्षक कुछ और भिन्न होता है। वह हाव भाव से निर्लिप्त होता है प्रतिकिया की अपेक्षा नहीं करता। प्रश्नोत्तर के अवसर देता है। अपना ज्ञान नहीं जोडता न ही वह अपनी शिक्षा को अपने आचरण से प्रभावित होने देता है। उसका कोई व्यक्तिगत उददेश्य नहीं होता।

इस तरह चारों प्रवृत्तियों में अनेक समानताए होते हुए भी कुछ असमानताए होती हैं। चारों में सबसे अधिक सम्मान उपदेशक का होता है तथा सबसे कम भाषण देने वालों का। किन्तु यह बात भी सच है कि उपदेश सुनने के लिए शायद ही दो चार लोग इकटठे हों और वे भी यदि दबाव न हो तो थोडी देर में उठ कर चले जाते है।

यदि हम वर्तमान वातावरण की समीक्षा करें तो वास्तविक और पूर्ण उपदेशक तो आपको मिलेंगे ही नहीं किन्तु आंशिक रुप से गुण रखने वाले उपदेशक भी बहुत कम मिलेंगे क्योंकि न तो योग्य उपदेशक दिखते है न ही उपदेश ग्रहण करने वालों की वैसी टीम और क्षमता इसलिए प्रवचनकर्ता ही लगभग उपदेशक मान लिये गये है। पुराने जमाने में जब बालक गुरु के आश्रम में जाता था तो गुरु ही अभिभावक उपदेशक और शिक्षक की भूमिका में होता था। अब शिक्षा एक प्रकार का नौकरी हो गई है। शिक्षक के लिए आवश्यक नहीं कि उसका व्यक्तिगत आचरण शिक्षा से जुडा हो किन्तु समाज में एक भावना बनी हुई है कि शिक्षक और गुरु एक समान होते है। यह भावना ठीक नहीं। वर्तमान समय में एक यह बुराई भी घुसती जा रही है कि पेशेवर लोग समाज को धोखा देने के लिए इसे पूरी तरह व्यवसाय बना लिये है। लेकिन इससे बडी खतरनाक बुराई यह आ गई है कि अपराधी तत्वों ने इन चारों सम्मानित व्यवसायों में अपना प्रवेश पा लिया है और वे इसका दुरुपयोग कर रहे है। इसलिए सबसे पहली आवश्यकता यह है कि इस प्रणाली से आपराधिक तत्वों को बाहर किया जाये। इस संबंध में मेरा एक सुझाव है कि वर्तमान सामाजिक वातावरण में गुरु और शिष्य परम्परा को पूरी तरह छोड दिया जाये। जब योग्य गुरु मिलते ही नहीं और धुर्त गुरुवों का प्रवेश बहुत अधिक है तो इस परम्परा को पूरी तरह छोड ही देना चाहिए। अनेक धुर्त लोग गुरुगोविंद दोउ खडे का उदाहरण देकर इस परम्परा का लाभ उठाना चाहते है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वतः के निर्णय करने की अंतिम स्वतंत्रता अपने पास रखनी चाहिये किसी दूसरे के पास नहीं चाहे वह कितना भी बडा उपदेशक हो अथवा कितना भी अच्छा प्रवचनकर्ता। हमें सब की सुनने किन्तु अपना निर्णय स्वयं करने के लिए तैयार रहना चाहिये। हमें यह भी ध्यान देना चाहिये कि ये प्रवृत्तियां जन्म से होने वाले ब्राहम्णों के लिए अनिवार्य नहीं है बल्कि योग्यता अनुसार कोई भी इस दिशा में किसी भी सीमा तक आगे बढ सकता हैं।

उपदेश और प्रवचन व्यक्ति के चरित्र निर्माण में सहायक होते है।

उपदेश और शिक्षा व्यक्ति की तर्क शक्ति जाग्रत करते हैं।

भाषण और शिक्षा व्यक्ति की क्षमता बढाते हैं किन्तु चरित्र निर्माण नहीं करते।

प्रवचन व्यक्ति को संस्कारित करते हैं। विचार शक्ति पर खराब प्रभाव डालते हैं। इन सबमें उपदेश देना और सुनना सबसे ज्यादा कठिन कार्य है किन्तु सबसे ज्यादा उपयोगी है।

भाषण देना और सुनना सबसे आसान है किन्तु सबसे कम उपयोगी है। माता पिता पहले गुरु होते हैं। उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। यदि उन्हे बचपन में ही अनुभव हो जाये कि उनका बालक प्रतिभाशाली है तो उसे प्रवचन और भाषण से बचाकर उपदेश और शिक्षा से जोडना चाहिये जिससे वह संस्कारित होने से बचे। उसे ऐसे संगठन और संस्थाओं से बचाना चाहिये जो बालको में संस्कारों का विस्तार करते हैं।

मैंने अपनी क्षमतानुसार इस विषय पर कुछ लिखा है आगे और चर्चा होगी तो अच्छा होगा।

मंथन क्रमांक –33

पर्सनल ला क्या क्यों और कैसे?

आज कल पूरे भारत मे पर्सनल ला की बहुत चर्चा हो रही है । मुस्लिम पर्सनल ला के नाम पर तो पूरे देश मे एक बहस ही छिडी हुई है। सर्वोच्च न्यायालय की एक बडी बेंच इस मुद्दे पर विचार कर रही है कि पर्सनल ला और मुस्लिम पर्सनल ला क्या है। पूरे देश मे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की सीमा निर्धारित किये जाने की भी चर्चा आम तौर पर चलती रहती है। कुछ लोग तो सम्पत्ति की अधिकतम सीमा की भी बात करते दिखते है इसलिये उचित होगा कि हम इस विषय पर अपना विचार मंथन करें।

पर्सनल ला व्यक्ति का व्यक्तिगत कानून होता है, जिसे व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत सीमा मे स्वतंत्रता पूर्वक बना भी सकता है बदल भी सकता है तथा कार्यान्वित भी कर सकता है। कोई सरकार या समाज व्यक्तिगत कानूनो मे न कोई दखल दे सकता है न ही कोई सीमा बना सकता है। किन्तु यह भी स्पष्ट है कि पर्सनल ला सिर्फ अकेले व्यक्ति का ही हो सकता है और यदि किसी व्यक्ति के किसी कार्य का संबंध किसी अन्य व्यक्ति के जुड जाता है तब वह सामाजिक या संवैधानिक स्वरूप ग्रहण कर लेता है, पर्सनल ला नहीं रहता । इस तरह मुस्लिम पर्सनल ला किसी भी रूप मे पर्सनल ला के दायरे मे नही आता बल्कि सामाजिक कानूनो के दायरे मे आता है। यदि हम पर्सनल ला को समझें तो इसकी कोई सीमा नहीं बन सकती। यह पाताल से लेकर ब्रम्हांड तक जा सकता है। विवाह, खान पान, तलाक, धर्म का पालन,

आत्म हत्या सरीखे सभी कार्य व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अंतर्गत आते हैं। समाज इन संबंधो को सबकी सहमति से अनुशासित कर सकता है किन्तु सरकार किसी प्रकार का कोई कानून नहीं बना सकती । मुस्लिम पर्सनल ला भी एक ऐसा ही मामला है जिसमे सरकार को किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप तब तक नही करना चाहिये जब तक वह आपसी सहमति के आधार पर बना है। मुसलमानो मे विवाह एक आंतरिक समझौता है, जो कुछ शर्तो के आधार पर होता है। ये शर्तें उचित है या अनुचित इसकी समीक्षा सरकार या कोई कानून तब तक नहीं कर सकता जब तक दोनो के बीच सहमति है। इस प्रकार विवाह संबंधी समझौता किसी भी समय समान रूप से तोडा जा सकता है, और समझौता टूटने की प्रकृया शुरू होते ही दोनो व्यक्तियों के व्यक्तिगत कानून अस्तित्व मे आ जाते हैं। इस प्रकृया मे प्रमुख विचारणीय प्रश्न यह है कि समझौता टूटने के बाद उस समझौते की सामाजिक या कानूनी समीक्षा हो सकती है या नही । मै स्पष्ट हूँ कि आप किसी के साथ कोई भी समझौता कर लें । वह टूटने के पूर्व तक कायम है और टूटने के बाद उसकी सामाजिक या कानूनी समीक्षा हो सकती है। कल्पना करिये की आपने समझौता करते समय दोनो की सहमति से कोई ऐसी शर्ते डाल दी, लिख दी, जो उचित नहीं थी तो समझौता टूटने के बाद उस शर्त के औचित्य पर विचार किया जा सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि भले ही उस समझौते मे लिखा हुआ हो या यह भले ही मुसलमानो की धार्मिक मान्यता हो कि महिलाएं समझौता नही तोड सकती किन्तु कोई भी समझौता और धार्मिक मान्यता व्यक्ति के पर्सनल ला के अधिकार मे कभी कोई कटौती नही कर सकते कल्पना करिये कि एक महिला किसी पति के साथ नही रहना चाहती तो उसे जबर जस्ती रोक कर रखना अपराध है या नही? भले ही वह अपनी पत्नी हो भले ही आपका उसके साथ कोई समझौता हो। किन्तु किसी भी समझौते के आधार पर किसी भी व्यक्ति को बल पूर्वक बंधक बनाकर नही रखा जा सकता, जब तक उसने कोई अपराध न किया हो । स्पष्ट है कि समझौता तोडने की स्वतंत्रता दोनो पक्षो को समान रूप से है । यदि उस समझौते मे कोई एक पक्षीय बात लिखी है तो उसकी समीक्षा समाज भी कर सकता है और राज्य भी कर सकता है क्योकि कोई भी समझौता किसी की सहमति से भी मौलिक अधिकारो के विपरीत कार्यान्वित नही किया जा सकता । कल्पना करिये की मैने किसी व्यक्ति को एक हजार रूपया उधार देकर एक महिने तक नौकरी करने का समझौता कर लिया और उस व्यक्ति ने एक सप्ताह के बाद समझौता तोड दिया। समझौते मे लिखा हुआ है कि एक महिने के अंदर तोडने वाले को जबरदस्ती काम लिया जा सकता है । मेरे विचार से समझौता टूटते ही वह व्यक्ति स्वतंत्र हो जायेगा, और आप उसको आर्थिक भरपाई की मांग कर सकते है । बल पूर्वक काम नही ले सकते क्योकि प्रत्येक व्यक्ति को अपने आंतरिक मामलो मे मौलिक अधिकार प्राप्त है। कल्पना करिये कि किसी व्यक्ति ने एक हजार रूपया उधार लेकर समझौता किया कि यदि वह दूसरे दिन वापस नही करेगा तो प्रतिदिन सौ या दो सौ रूपये का दंड देगा। रूपया वापस न करने पर वह प्रतिदिन दंड दे सकता है। किन्तु यदि वह दंड न दे तो उसे बाध्य नही किया जा सकता। यदि कानून समीक्षा करेगा तो उचित दंड ही मान्य होगा, समझौते का दंड नही।

आज भारत के मुसलमान पर्सनल ला की बहुत चिंता कर रहे है किन्तु वे भूल गये कि इसकी नीव तो उसी दिन रख दी गई थी जिस दिन भारत मे हिन्दू कोड बिल बना था। अर्थात विवाह, तलाक, खान पान, वेष भुषा, जैसे व्यक्तिगत मामलो मे सरकार भी कोई कानून बना सकती है तथा न्यायालय भी दखल दे सकता है। अंधेर नगरी चौपट राजा के समान उस समय हिन्दुओ पर लगाये जा रहे अन्याय पूर्ण प्रतिबंधो की मुसलमानो के परवाह नही की तो अब यदि उसी आधार पर भारत सरकार मुसलमानो के बहु विवाह पर प्रतिबंध लगा दे तो मुसलमान कैसे आवाज उठा सकते है। क्योकि पर्सनल ला प्रत्येक व्यक्ति के समान होते है उसमे हिन्दू मुसलमान का भेद नहीं होता है। उस समय तो भारत के मुसलमानो को आनंद आ रहा था कि उन्हे चार विवाह की छूट देकर हिन्दुओ को एक विवाह पर प्रतिबंधित किया जा रहा है तथा वे इस तरह अपनी आबादी बढा लेगे। सत्तर वर्षो तक मुसलमानो ने संगठित वोट के आधार पर भारत के बहुसंख्यक हिन्दुओ को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाकर रखा । सत्तर वर्षो तक अगर अंधेर नगरी मे आपने माल मलाई खाई है और अब फांसी पर चढने की बारी है तब चिल्लाने से क्या होगा।

एक बात और विचारणीय है कि किन्ही धार्मिक ग्रंथो के माध्यम से ईश्वर या खुदा ने आपको जो कार्य करने का निर्देश दिया है, उन कार्यो को सरकार या कोई अन्य धार्मिक मान्यता मान सकता

है। किन्तु जिन कार्यो को आपके धर्म ग्रन्थो ने निरूत्साहित करने की सलाह दी है तथा जिनकी अधिकतम सीमा निर्धारित की है, उन कार्यो को राज्य और समाज यदि प्रतिबंधित करे तो वह आपका धार्मिक अधिकार नही हो सकता बल्कि वह प्रतिबंध ही धार्मिक कार्य माना जाना चाहिये। आप रोजा, नमाज , हज जकात, कलमा को अपने धार्मिक अधिकार कह सकते हैं। किन्तु तलाक बहु विवाह, मांसाहार आदि आपके आर्मिक अधिकार नही हो सकते। कोई भी कानून आपको चार से अधिक विवाह करने के लिये बाध्य नही कर सकता। न ही आपको तलाक देने के लिये वाध्य कर सकता है। किन्तु कोई भी कानून आपको एक से अधिक विवाह करने से रोक सकता है क्योकि आपको धर्म मे चार तक विवाह करने की छूट दी है न की चार विवाह करने का आदेश दिया है। भारत के मुसलमान तीन तलाक चार विवाह या मांस भक्षण के मामले मे यदि पर्सनल ला का सहारा लेते है तो वह धार्मिक दृष्टि से पूरी तरह गलत है। किन्तु सरकार और न्यायालय को यह भी अधिकार नही कि वह किसी व्यक्ति को संबंध विच्छेद करने से रोक सके। तीन तलाक तो उनका आंतरिक या सामाजिक मामला है। पर्सनल ला की नजर मे तो एक तलाक ही काफी है। यदि किसी भी एक पक्ष ने समझौता तोडने की घोषणा कर दी तो वह समझौता किसी भी तरह कायम नही रह सकता । भले ही उस समझौते के आधार पर दोनों पक्षो के बीच किसी भी प्रकार का न्याय संगत निपटारा हो जाये किन्तु किसी भी व्यक्ति को उसकी सहमति के बिना कही भी रोक कर नही रखा जा सकता। जिस समय हिन्दुओ के पति पत्नी के बीच संबंध विच्छेद मे कानूनी हस्तक्षेप करने का प्रावधान बना वह भी पूरी तरह गलत था और वर्तमान मे जो बन रहा है यह भी पूरी तरह गलत है। धर्म और समाज व्यक्ति को अनुशासित कर सकते है और ये सारे नियम सामाजिक अनुशासन के अंतर्गत ही आते है। शासन के अंतर्गत नही। न तो सरकार, विवाह, दहेज, छुआछूत, तलाक, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, सम्पत्ति की सीमा जैसा कोई कानून बना सकती है न ही उसे बनाना चाहिये। ऐसे सारे कानून व्यक्ति के व्यक्तिगत और सामाजिक अधिकारो के उलंघन के अंतर्गत आते है। यह अलग बात है कि स्वतंत्रता के पूर्व से ही इस प्रकार का उलंघन विदेशी सरकारे करती रही और हमारे संविधान निर्माता भी उन विदेशियों की नकल करते रहे। ऐसी नकल आज तक जारी है, और मै समझता हूँ कि न्यायालय अथवा सरकार इस संबंध मे जो भी कदम उठायेगी वह व्यक्ति के व्यक्तिगत अधिकारो के उलंघन के रूप मे ही होता दिखता है।

अब तो भारत के मुसलमानो के समक्ष एक ही मार्ग दिखता है कि वे भारत मे समान नागरिक संहिता के पक्ष मे जोर शोर से आवाज उठावे । भारत के प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार होगा तथा कोई अल्प संख्यक बहु संख्यक नही होगा। सरकार किसी भी व्यक्ति के आंतरिक मामलो मे कोई हस्तक्षेप नही करेगी। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी धार्मिक और सामाजिक मान्यताए मानने की पूरी स्वतंत्रता तब तक होगी जब तक वह किसी अन्य व्यक्ति की स्वतंत्रता मे बाधा पैदा न करे। यदि भारत के मुसलमानो ने यह बात नही मानी तो यह भी संभव है कि भारत हिन्दू राष्ट की तरफ तेजी से बढना शुरू कर दे । मै मानता हूँ कि यह कदम न हिन्दुओ के लिये अच्छा है न मुसलमानो के लिये। फिर भी यदि घर जले तो जले किन्तु चुहो से पिंड छूट जाये के आधार पर हिन्दू बढे तो इसका दोष सिर्फ हिन्दुओ को नही दिया जा सकता।

मंथन क्रमांक –34

भीम राव अंबेडकर कितने नायक, कितने खलनायक?

किसी भी महत्वपूर्ण व्यक्ति की सम्पूर्ण समीक्षा के बाद या तो हम उसे नायक के रुप में मानते है या खलनायक के रुप में या औसत और सामान्य। आकलन करते समय तीन का आकलन किया जाता हैं– (1) नीति (2) नीयत (3) कार्य। हम इन सबकी समीक्षा करने में तीन व्यक्तियों के बीच तुलना करेंगे–(1) गांधी (2) नेहरु (3) अम्बेडकर। ये तीनों समकक्ष थे समान कार्य में लगे हुये थे तथा समकालीन थे। मैंने जो समीक्षा की है उसके अनुसार गांधी को मैंने नायक के रुप में देखा है और अम्बेडकर को खलनायक के रुप में। नेहरु,पटेल तथा अन्य को औसत दर्जे का माना जा सकता है।

किसी भी व्यक्ति में योग्यता तीन प्रकार से आती है– (1) जन्म पूर्व के संस्कार (2) पारिवारिक वातावरण (3) सामाजिक परिवेश। मेरे आकलन के अनुसार भीमराव अम्बेडकर मे एक कुटिल राजपुरुष के सारे

दुर्गुण मौजुद थे। वे विलक्षण प्रतिभावान थे। सत्ता के प्रति प्रांरभ से अंत तक तिकडम करते रहे। वे पूरी तरह भावना विहीन थे और उनके अन्दर बौद्धिक चातुर्य चरम सीमा तक था। वे बालिग होने से लेकर मृत्यु तक धर्म,राष्ट्र या समाज से भी उपर अपने राजनैतिक स्वार्थ पूर्ति को मानते रहे। यह गुण उन्हें कहॉ से प्राप्त हुआ यह पता नहीं। क्योंकि प्रत्यक्ष रुप से तो उनके माता पिता विलक्षण प्रतिभा के नहीं थे, पारिवारिक वातावरण और सामाजिक परिवेश भी अछूत गरीब परिवार का ही था। पूर्व जन्म वे मानते ही नहीं थे इसलिये उसका प्रश्न ही नहीं उठता।

उनके जीवन का अधिक समय स्वतंत्रता संघर्ष काल का है। स्वतंत्रता संघर्ष में उनकी भूमिका शून्यवत रही। या तो उन्होने अंग्रेज सत्ता से तालमेल का प्रयास किया या कांग्रेस में रहकर स्वतंत्रता संघर्ष में अपनी गुटबंदी के माध्यम से व्यवधान पैदा किया। पूरे जीवन भर वे गांधी, नेहरु पटेल के साथ रहते हुये भी हर बात में टकराते रहे। गांधी की लोकप्रियता के समक्ष अपने को बौना देखकर वे उनके समक्ष झुक जाते थे। नेहरु पटेल को तो वे अपना प्रतिद्धंदी मानते ही थे। अपनी राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं से प्रभावित होकर सबसे पहले उन्होने इस्लाम,अछूत, और शूद्र को एक जूट करके नेतृत्व का प्रयास किया। बताया जाता है कि इसके लिए उन्होने स्वयं इस्लाम ग्रहण करके मुसलमान बनने की कोशिश की। बात बढी तो गांधी जी ने अनशन करने की धमकी देकर उन्हें मुसलमान बनने से रोका। निराश होकर और जिन्ना द्वारा मुस्लिम नेतृत्व संभाल लेने के बाद अम्बेडकर जी ने अछूत, हरिजन और महिलाओं को मिलाकर एकजुट करने का प्रयास किया। उन्होने अंत तक यह दिखाने की कोशिश की कि उनके मन में सवर्णो के प्रति प्रतिशोध का भाव है, घृणा का नहीं। किन्तु ऐसा भी संदेह होता है कि यह सब उनकी सोची समझी योजना थी क्योंकि उन्हें पूरी शिक्षा जिस ब्राहम्ण ने दी थी, उनका अम्बेडकर जी पर इतना अधिक स्नेह और प्रभाव था कि अम्बेडकर जी ने अपने गुरु का नाम ही अपने साथ जोडकर अम्बेडकर कर लिया। उनका सारा लालन पालन शिक्षा दीक्षा तत्कालीन महाराजा की सहायता से पूरी हुई। उन्होने अपना दूसरा विवाह भी एक ब्राहमणी से ही करने को प्राथमिकता दी। उनके मन में महिलाओं के प्रति कैसी धारणा थी यह भी उनका अपनी पत्नी के प्रति व्यवहार से स्पष्ट होता है कि उनकी पत्नी मृत्यु के पूर्व तीर्थ यात्रा करना चाहती थी और अम्बेडकर जी ने पुरुष प्रधानता के बल पर उसे नहीं जाने दिया।

अम्बेडकर जी ने स्वतंत्रता के पूर्व और पश्चात जो भी नीतियां बनाई वे सारी समाज में वर्ग विद्वेश और वर्ग संघर्ष पैदा करने वाली थी। उनका एकमात्र लक्ष्य था भारत की परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था को छिन्न भिन्न करना। वे श्रमजीवी और बुद्धिजीवी के बीच इस सीमा तक बुद्धिजीवियों के पक्ष में थे कि उन्होने अंतिम समय तक श्रमजीवियों के विरुद्ध और बुद्धिजीवियों के पक्ष में नीतियां बनाईं। स्पष्ट है कि स्वतंत्रता के पूर्व की सामाजिक व्यवस्था में श्रमजीवियों को सामाजिक आरक्षण के माध्यम से योग्यतानुसार स्थान पाने का अधिकार नहीं था। गांधी इस जातिवाद को कमजोर करना चाहते थे और अम्बडेकर इस जातिवाद की बुराई का भरपूर लाभ उठाना चाहते थे। उन्हे यह पता था कि गरीब ग्रामीण श्रमजीवियों पर वामपंथियों का विशेष प्रभाव है इसलिए बुद्धिजीवियों को एकजुट करके अपने साथ जोडना सत्ता का मूल मंत्र है। उन्होने गरीब ग्रामीण श्रमजीवियों की चिंता छोडकर बुद्धिजीवी अवर्णो का सवर्णो के साथ आरक्षण के नाम पर एक ऐसा समझौता करा दिया जिस आधार पर बुद्धिजीवी सवर्णो के लूट के माल में बुद्धिजीवी अवर्णो की भी हिस्सेदारी हो गई और आज तक श्रमजीवी आज भी उस षडयंत्र का शिकार है। आज भी बुद्धि और श्रम के बीच खाई लगातार बढती जा रही है। आज भी 98 प्रतिशत अवर्ण श्रमजीवी अपने उसी हाल पर श्रम करने को मजबूर हैं और दो प्रतिशत अवर्ण बुद्धिजीवी इन सबका शोषण करने का वैधानिक अधिकार प्राप्त कर चुके हैं। यह अम्बेडकर जी की ही सूझबूझ थी कि उन्होने संविधान बनाते समय ऐसे प्रावधान घुसा दिये जिसके आधार पर लोक गुलाम सरीखा हो गया और तंत्र सर्वाधिकार प्राप्त मालिक के समान। यहॉ तक कि लोकतंत्र में संविधान सबसे उपर होता है किन्तु अम्बेडकर जी की कृपा से ही संविधान संशोधन के असीम अधिकार भी तंत्र के पास ही सुरक्षित कर दिये गये।

अम्बेडकर जी ने जो महत्वपूर्ण कार्य किये उनमें भारतीय संविधान और हिन्दू कोड बिल की ज्यादा दुहाई दी जाती है। 70 वर्षो में यह सिद्ध हो चुका है कि भारत में दिख रही सारी समस्याओं का मुख्य कारण वर्तमान रददी संविधान के प्रावधान ही हैं। गांधी को धोखा देने के लिये संविधान मे नीति

निर्देशक सिद्धान्त का ढोग अम्बेडकर ने ही रचा। अम्बेडकर जी ने गांधी के मरते ही लोक तंत्र की परिभाषा लोक नियंत्रित तंत्र से बदल कर लोक नियुक्त तंत्र कर दी। भारत के संविधान में विदेशों की पूरी तरह नकल की गई और भारतीय परिवेश को जानबूझकर किनारे किया गया। भारतीय संविधान से परिवार और गांव को बाहर निकाल दिया गया। दूसरी ओर धर्म, जाति, अल्पसंख्यक,महिला जैसे समाज तोडक प्रावधानों को संविधान का महत्वपूर्ण भाग बना दिया गया। ऐसा समस्यायें पैदा करने वाला संविधान स्थापित होने के बाद भी अम्बेडकर संतुष्ट नहीं थे क्योंकि वे तो इससे भी अधिक घातक संविधान बनाना चाहते थे। उन्होने यह व्यक्त भी किया था कि वे इस संविधान से बिल्कुल संतुष्ट नहीं है । बाद में उन्होने हिन्दू कोड बिल बनाकर भारत की सामाजिक संरचना की छाती में एक और कील ठोक दी जिसके परिणाम से आज भी भारत कराह रहा है। उन्होंने मुसलमानों की आबादी बढती रहे ऐसा सोचकर हिन्दू कोड बिल में यह प्रावधान किया कि हिन्दू एक से अधिक विवाह नहीं कर सकते और मुसलमान कर सकते है। इस प्रावधान को उन्होने उन हिन्दू महिलाओं के प्रति न्याय बताया जिस हिन्दू धर्म से उनके मन में सदैव घृणा रही। किन्तु उन्होने कभी उन मुस्लिम महिलाओं की चिंता नहीं की जिसके प्रति उनके मन में प्रारंभ में ही प्रेम जगा था । उनके अन्दर नैतिकता का भाव कितना प्रबल था यह इस बात से स्पष्ट होता है कि ऐसा कहा जाता है कि हिन्दू कोड बिल के पक्ष में एक बडे वैदिक विद्वान को खडा करने के लिए उन्होने मंत्री रहते हुए घूस के पैसे भिजवाये और उसे पक्ष में किया। उनकी भाषा नीति की भी चर्चा होती है और हमारे कई मित्र उनके संस्कृत प्रेम की प्रशंसा करते है। मैं नहीं कह सकता कि उनका संस्कृत प्रेम हिन्दी के विरुद्ध कोई चाल थी या वास्तविक प्रेम किन्तु उनका अंग्रेजी प्रेम सर्वविदित है। उन्होने संयुक्त परिवार प्रथा को सम्मिलित परिवार के रुप में बदलने के प्रयत्न किया । इसके पीछे उनका क्या भाव था यह मुझे नहीं पता किन्तु यदि उन्होने संयुक्त परिवार की जगह लोकतांत्रिक परिवार का प्रारुप दिया होता तो जिस तरह आज परिवार टूट रहे है वे नहीं टूटते। हो सकता है कि उनकी कल्पना परिवार को छिन्न भिन्न करने की रही हो। मुझे आश्चर्य होता है कि वे परिवार व्यवस्था को संविधान से बाहर रखे दूसरी ओर कानूनों में यह भी शामिल कर दिया कि पत्नी को छोडकर कोई अन्य व्यक्ति किसी भी परिस्थिति में तब तक परिवार का सदस्य नहीं हो सकता जब तक वह रक्त संबंध से न जुडा हो।

आज हम देख रहे हैं कि भारत का हर सत्ता लोलुप नेता, हर बुद्धिजीवी, आरक्षण का लाभ ले चुके बुद्धिजीवी अवर्ण, अम्बेडकर जी को भगवान की तरह मानते हैं । इनके सामने कोई अम्बेडकर जी की जरा सी आलोचना कर दे तो ये सब आसमान सर पर उठा लेते हैं। यहॉ तक कि यदि कोई भारतीय संविधान में भी कोई खामी निकाल दे तो इनकी भावनाये भडक जाती है क्योंकि भारत में अम्बेडकर जी ही अकेले वो व्यक्ति हैं जिन्होंने राजनेताओं को अनंतकाल के लिए यह अधिकार दिया कि वे समाज को गुलाम बनाकर रख सकें। अम्बेडकर जी ने ही बुद्धिजीवियों को यह अधिकार दिया कि वे जितनी मर्जी उतना श्रम का शोषण कर सकें। अम्बेडकर जी ने ही अल्पसंख्यकों को यह अधिकार दिया कि वे जितनी चाहे उतनी आबादी बढा सकें। यदि कोई हिन्दू एक से अधिक विवाह करना चाहता है तो उसे मुसलमान बन जाना चाहिये। यदि इतने अधिकार मिलने के बाद भी कोई अम्बेडकर जी को भगवान न माने तो यह कृतघ्नता ही कहा जायेगा। यहॉ तक कि जो थोडे से लोग अंदर अंदर अम्बेडकर जी की आलोचना भी करते है वे भी इसलिए नहीं करते कि उनके मन में गरीब ग्रामीण श्रमजीवी के प्रति कोई अच्छा भाव है बल्कि वे तो इसलिए आलोचना करते है कि अम्बेडकर जी ने सवर्णो के एकपक्षीय लाभ में से दो प्रतिशत अवर्ण बुद्धिजीवियों को हिस्सेदार बना दिया।

किसी को इस बात की चिंता नहीं कि समाज कब तक गुलाम रहेगा, कब तक भारतीय संविधान संसद के जेल खाने में बंद रहेगा? कब तक गरीब ग्रामीण श्रमजीवी अपने इसी हाल पर संतोष करते रहेंगे? इसलिये यह आवश्यक है कि अम्बेडकर जी की पोल खुलनी चाहिये। मैं मानता हूॅ कि कुछ लोग सब कुछ जानते हुये भी इस रणनीति के अन्तर्गत अम्बेडकर जी की पूजा करते होंगे कि साम्यवादी और साम्प्रदायिक मुसलमान बुद्धिजीवी अवर्णो को भी अपने साथ जोडकर एक बडी ताकत न बन जाये। इतना होते हुये भी हमे सत्य को स्थापित करते ही रहना चाहिये। समय आ गया है कि किसी खलनायक को परिस्थितिवश नायक कहने की स्थिति से बचा जाये। अम्बेडकर जी ने जो गलत किये है उन सबको सुधारने का प्रयत्न

किया जाये। परिवार गांव को संवैधानिक मान्यता दिलाई जाये। हमारे कलंक रुपी हिन्दू कोड बिल से मुक्ति पाई जाये। समान नागरिक संहिता स्थापित हो। अल्पसंख्यक बहुसंख्यक, का भेद खतम हो। महिला पुरुष सबको समान अधिकार प्राप्त हो और संविधान संशोधन में ग्राम सभाओं अथवा मतदाताओं की सीधी भूमिका हो। मैं समझता हूँ कि यदि हम इस दिशा में ठीक गति से आगे बढे तो अम्बेडकर जी का यथार्थ अपने आप समाज के समझ प्रकट हो जायेगा।

केजरीवाल की एक समीक्षा

आजकल ईवीएम की बहुत चर्चा चल रही है कि क्या ईवीएम भी हैक हो सकता है। मेरे विचार से वर्तमान युग में सब कुछ संभव है और इस स्थिति में ईवीएम भी हैक किया सकता है तथा हारने वाले उम्मीदवार भी झूठा आरोप लगा सकते हैं। मैंने विचार किया तो मुझे लगा कि ई वी एम एक संवैधानिक व्यवस्था के अंतर्गत काम करता है जबकि आरोप लगाने वाले कुछ व्यक्ति हैं कोई व्यवस्था नहीं। विशेषकर तब जब आरोप लगाने वाले मनमोहन सिंह या नीतिश कुमार सरीखे विश्वसनीय लोग

ना होकर मायावती या लालू प्रसाद अरविंद केजरीवाल सरीखे ऐसे लोग हैं जिनकी झूठ बोलने की प्रतिदिन की आदत है। मैं समझता हूँ कि ईवीएम का बहाना अपनी हार को संदेहास्पद बनाने के लिए एक बहाना मात्र है और इससे अरविंद केजरीवाल की प्रतिष्ठा पूरी तरह गर्त में चली गई हैं।

अब तक मुझे ऐसा लगता था कि केजरीवाल जी भले ही अपने साथियों के भ्रष्टाचार पर चुप हो, भले ही वे राजनीति के उददेश्य से कोई गैर कानूनी काम करते हो किन्तु मुझे इस बात का कभी संदेह नहीं हुआ कि वे व्यक्तिगत अथवा पारिवारिक लाभ के लिए गलत कार्य करते होंगे। मेरे कई विश्वसनीय मित्रों ने गंभीर संदेह व्यक्त किये किन्तु मुझे कोई विश्वसनीय प्रमाण नहीं मिला। अब उनके ही मित्र कपिल जी ने उनके परिवार के लोगों पर सत्ता के दुरुपयोग के सहारे लाभ कमाने के गंभीर आरोप लगाये और अरविंद जी चुप रहे उससे मुझे अपने विश्वास पर संदेह पैदा हुआ। दूसरी ओर मेरे अपने निकट के साथी सिद्धार्थ शर्मा जी ने मुझे इस बात के लिए आश्वस्त किया कि अरविंद केजरीवाल भ्रष्ट नहीं है। अब भी मैं निश्चित रुप से तो नहीं कह सकता कि कौन गलत है और कौन सही किन्तु मुझे अब यह कहने में संदेह हो रहा है कि अरविंद केजरीवाल भ्रष्ट नहीं होंगे। वैसे मैंने पहले भी जब भी अरविंद केजरीवाल की समीक्षा की है तो मैंने यही लिखा है कि उनमें प्रधानमंत्री बनने की योग्यता और क्षमता है। किन्तु नीयत का आकलन अभी बाकी है जो भविष्य में होगा तथा जिस आकलन पर नीतिश कुमार, मनमोहन सिंह, नरेन्द्र मोदी अपनी विश्वसनीयता सिद्ध कर चुके है। मैंने करीब 2 वर्ष पूर्व ही ज्ञानतत्व 311 तथा 323 में अरविंद केजरीवाल की समीक्षा करते हुये यह स्पष्ट किया था कि अरविंद जी को अपनी विश्वसनीयता की परीक्षा देनी बाकी है। अब मुझे इस परीक्षा में भी उनके उत्तीर्ण होने में संदेह व्यक्त होने लगा है।

प्रश्नोत्तर

1) लक्ष्मी नारायण मित्तल मुरैना म0 प्र0

विचार—मेरे विचार में 1947 में मात्र सत्ता परिवर्तन हुआ था। स्वाधीनता या स्वततंत्रता नहीं थी।

मानव सृष्टि के आरम्भ में न राजा रहा होगा न दण्डविधान होगा। न कोई सभा होगी। सम्भवतः लोग अपने विवेक से अपना जीवन जीते होंगे परन्तु जब लोभ और स्वार्थ बढे तो राजा प्रजा की संकल्पना की गई। समाज में समरथ न्याय बडी मछली छोटी मछली को खा जाती है, जब बढ गया तो दण्ड विधान की संकल्पना की गई।

गरीबी, निरक्षरता और साम्प्रदायिक या जातिगत विद्वेश देश की तीन बडी समस्याए है। सन 1947 में भारत की जितनी जनसंख्या थी आज उससे अधिक तो गरीबी रेखा के नीचे जीते है। देश में निरक्षरता भी कम नहीं हुई है। भेदभाव की स्थिति आज भी बनी हुई है। वर्तमान शासन इसके लिए पूर्ववर्ती शासन को दोषी मानता है और यह विगत का प्रोग्रेस कार्ड माना जाता है।

देश में अब तक चौदह प्रधानमंत्री हो चुके है। इनमें एक चौथाई समय तक गैरकांग्रेसी प्रधानमंत्री रहे है। अतःसत्तर साल के कांग्रेसी दुशासन की बात गले नहीं उतरती ।

भारत ने संसदीय लोकतंत्र को चुना यद्यपि गांधी जी ने हिन्द स्वराज में ब्रिटिश पालियामेंट को बेसवा कहा है। बाद में जनवरी 1921 को यंगइंडिया में लिखते हुए गांधी पार्लियामेंन्ट्री ढंग का स्वराज प्राप्त करना ही देश का लक्ष्य मानते रहे। चाणक्य नीति में कहा गया है कि राजा द्वारा किया गया पाप पुरोहित को लगता है पुरोहित यानि आज का जनहित बुद्धिजीवी यानि राजा पर नियंत्रण बहुजीवियों का था। सम्पूर्ण भारतीय चिन्तन परम्परा में शंका,पृच्छा प्रश्न तर्क प्रतिप्रश्न को विशेष आदर दिया गया है। राम की सभा में भी एक नास्तिक जाबाली था। वैचारिक सहिष्णुता सामाजिक स्वस्थता का महत्वपूर्ण लक्षण है।

अगर इस देश के अब तक के चौदह प्रधानमंत्री कुछ नहीं कर पाये तो 15 वे प्रधानमंत्री से अपेक्षा है कि वे व्यवस्था परिवर्तन के अपने नक्शे को साफ साफ लिपिबद्ध कर दें ताकि 16 वॉ प्रधानमंत्री उनके रिपोर्टकार्ड पर कोई चिन्ह न लगाये।

सामान्य नागरिक इज्जत की रोटी चाहता है। इससे अधिक कुछ नहीं। भारत को खोया गौरव प्राप्त करना आंलकारिक भाषा की व्याप्ति है। नीति अनीति का अन्तिम निर्णय करने का अधिकार राजा का नहीं प्रजा का है।

बडी विडम्बना यह है कि हमारे देश में राजनैतिक दलों में कोई लोकतंत्रीकरण नहीं है। नयी पुरानी सभी पार्टिया परिवार या व्यक्ति पूजन तक सीमित है। आज की चुनाव व्यवस्था में यह भी सम्भव है कि किसी की निश्चित मात्रा में मत न मिलने के कारण उसकी जमानत जब्त हो जाये परन्तु सर्वाधिक मतों के आधार पर विजयी घोषित हो जाये।

घोडो पर ठीक से सवारी करना घुडसवार की दक्षता पर निर्भर करता हैं रथ में बैठा राजा भी सारथि की क्षमता पर निर्भर है। श्री कृष्ण इसके उदाहरण है।

हर समाज अपनी जीवन शैली से संचालित होता है। गुलाम देशों में आधिपत्य जमाये देशों की संस्कृति के तत्वों को समेटने की होड लग जाती है। वह ऐसा है जैसे फटे कपडे में तल्ली लगाना या जूते गाठना। हम गांधी की कसम खाते है परन्तु उनकी इस बात पर ध्यान नहीं देते कि पाश्चात्य आधुनिक सभ्यता और उसके अवशेष आसुरी संस्कृति के लक्षण है। हमें तय करना होगा कि हम पश्चिम का अंधानुकरण करेंगे या फिर वैकल्पिक नीतियॉ भारतीय परम्परा में बनायेंगे। मेरे सपनों के भारत में गांधी कहते है कि मेरा स्वराज्य तो हमारी आत्मा को अक्षुण रखना है। मैं बहुत सी नयी चीजे लिखना चाहता हूँ परन्तु वे तमाम हिन्दुस्तान की स्लेट पर लिखी जानी चाहिये। हॉ मैं पश्चिम से भी खुशी से उधार लूंगा पर तभी जब मैं सूद समेत उसे लौटा सकू।

संस्कृति और समृद्धि के बीच तालमेल बिठाना आज की सर्वाधिक प्राथमिकता होनी चाहिये। भूतकाल में भी और 15 अगस्त 1947 को सत्ता परिवर्तन के बाद बहुत कुछ ऐसा है जिसे सर्वथा नकारा नहीं जा सकता।पंडित नेहरु ने अनके गलतियां की होगी। आज हम कहते है कि मैं होता हो ऐसा करता। यह सब बाद की सोच है । नेहरु ने देश में प्रजातंत्र कायम रखा यह उनकी सर्वोत्तम देन है। नहीं तो अधिनायक होने के सारे लक्षण तब भारत में मौजूद थे। हम अपने पडोस के देश को देख ले । आधी सदी पहले यदि हम झिझक और इतिहास को पार कर लेते तो आज भारत कुछ और होता, ऐसा कहा जा रहा है।

ऐसा आर्थिक घटक जो देश की संस्कृति के अधिकतर घटकों से तालमेल में नहीं है वह शाश्वत कल्याणकारी नहीं हो सकता। अर्थशास्त्र को नीतिशास्त्र से अलग कर देने का परिणाम आज पश्चिम भुगत रहा है। भारत को इससे बचाइये।

उत्तरः— नरेन्द्र मोदी के आने के पूर्व तक भारत की शासन व्यवस्था समाजवाद तथा अल्पसंख्यक तुष्टीकरण के नेहरु मॉडल पर ही चलती रही है। अतः सत्तर वर्ष कहा जा सकता है।

आपने भारतीय संस्कृति को प्रोत्साहित करने की सलाह दी। किन्तु मैं इससे सहमत नहीं। आज भारत में दो संस्कृतियों के बीच टकराव चल रहा है। (1) जो कुछ पुराना है वही ठीक है। (2) जो कुछ पुराना है वह सब गलत है। ऐसी स्थिति में दो भिन्न संस्कृतियों पर चिंतन करने की अपेक्षा वास्तविकता के धरातल पर विचार मंथन करने की आवश्यकता है। भारत ब्राम्हण प्रवृत्ति का देश रहा है। जिसमें विचार मंथन सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता था और भारत विचारों का निर्यात करता था। जब से भारत में विचार मंथन बंद

करके संस्कृति की नकल करना शुरु हुआ तब से भारत में गुलामी आनी शुरु हुई । अब आवश्यकता यह है कि भारत विभिन्न संस्कृतियों की नकल करने की अपेक्षा स्वतंत्र विचार मंथन शुरु करे और दुनिया को दिखा दे कि भारत फिर से विचारों का निर्यात करने की स्थिति में है।

2) प्रश्न– भारत पाकिस्तान बार्डर पर हमारे सैनिक मारे जा रहे हैं इस संबंध में आपने अब तब कोई चिंता व्यक्त नहीं की है अपनी प्रतिक्रियाए दें।

उत्तरः—भारत,पाकिस्तान की सरकारें इन घटनाओं पर बिल्कुल विपरीत तथ्य प्रस्तुत करती है अतः यथार्थ क्या है यह मैं नहीं समझ पता। बिना विश्वसनीय जानकारी के मैं कुछ नहीं बोलना चाहता। भारत पाकिस्तान बार्डर की समस्या राष्ट्रीय समस्या है सामाजिक नहीं। राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान के लिए हमने एक सरकार का गठन कर रखा है और सामाजिक समस्याओं के समाधान की चिंता हमें करनी चाहिये। बार्डर पर समस्या से तो सरकार ठीक से निपट लेगी किन्तु यदि हम सामाजिक समस्याओं से ध्यान हटाकर राष्ट्रीय समस्याओं की चिंता शुरु कर दें यह हमारा पलायन माना जायेगा। यही कारण है कि मैं ऐसी घटनाए दिनभर सुनने के बाद भी प्रभावित या चिंतित नहीं होता। मैं स्पष्ट कर दूँ कि मैं बिना सोचे समझे युद्ध उन्माद की भाषा नहीं बोल सकता।

3) शारदा बेन पटेल ,फेसबुक से

प्रश्न—जब सरकार चुन बैठे तो जनता उसे जगाये ये जरुरी है वरना ऐसे कई जवान शहीद होंगे और सरकार बातें करते रहेगी।

उत्तरः— पटेल जी हमारे शहर का कोई गुंडा शहर को दबाकर रखता है तब सरकार को जगाना ज्यादा जरुरी है या कश्मीर में होने वाली हिंसा अथवा बार्डर पर होने वाले टकराव में ज्यादा जगाना जरुरी है। हमें चाहिये कि हम अपने आंतरिक समस्याओं को ठीक कर ले और बार्डर संबंधी समस्याओं के लिए सरकार को फ्री हैंड दे दें। जो लोग अपने गांव के गुंडे के खिलाफ गवाही देने से डरते है और कश्मीर या बार्डर के बारे में चिंता करते है या सरकार को सलाह देते हैं यह निकम्मे लोग हैं बातूनी लोग है और महत्वहीन लोग है।

4) मोहन किंकर पाण्डेय, फेसबुक से

प्रश्नः—आपने लिखा है गुरु गोविंद दोउ खडे जैसे कथन धुर्त गुरुवों द्वारा भावना प्रधान लोगों के शोषण के हथियार है। ऐसे वाक्यों को निरुत्साहित करना चाहिये। आप बताने की कृपा करे कि संत कबीर ने भी तो ऐसी ही कहा था। गुरु की महिमा से इन्कार कैसे किया जा सकता है।

उत्तरः—कबीरदास जी ने जब कहा उस समय गुरु बनना व्यवसाय नहीं था। आज कि परिस्थितियां पूरी तरह भिन्न हो गई है वैसे भी सिद्धांत यह है कि मृत महापुरुषों के विचार देशकाल परिस्थिति अनुसार आकलन करके ही मानना चाहिये। अंतिम निणर्य स्वयं का होना चाहिये, अंधानुकरण ठीक नहीं । इस आधार पर कबीरदास जी की वाणी की समीक्षा करनी चाहिये। इसी तरह गुरु का स्थान ईश्वर से उपर हो ही नहीं सकता। राम और कृष्ण ने भी गुरुवों को मार्गदर्शक माना था अंतिम सत्य नहीं । यदि गुरु का आदेश उन्हे ठीक नहीं लगा तो उन्होने मानने से इंकार कर दिया। उस समय का गुरु शब्द ज्ञानवाचक था। जो वर्तमान समय में बदलकर संज्ञा बन गया है। उस समय के गुरु गुरुडंम नहीं फैलाते थे। श्रद्धा की दूकानदारी नहीं करते थे। समाज का भावनात्मक शोषण नहीं करते थे। इसलिए संज्ञा रुपी गुट शब्द को ज्ञानवाचक गुरु के साथ तुलना करना उचित नहीं है।

5) एम एस सिंगला,अजमेर

विचारः— ज्ञानतत्व का अंक 348 मिला। सावधान!युग बदल रहा है में दिए गए मनोमंथन में युगों के विभाजन चार संस्कृतियों पर और वर्तमान परिवेश पर अच्छा विवेचन, विश्लेषण और सामंजस्य बैठाकर मंथन प्रस्तुत किया गया है। साथ ही स्वतंत्र भारत के समय और अब समय की लेती करवट को समाहित करते हुए व्यापक विचारधारा विचारणीय बन पडी है।

जहॉ तक लिखित और वांगमय इतिहास का प्रश्न है, इतिहास इतिहास रहता है जैसे मानव की आत्मा। मानव चोला कोई सा भी धारण करें, आत्मा वही रहती है। कांग्रेस शासन ने अपने अनुसार इतिहास की रचना कराने का प्रयास किया। वैसे ही समय अपने अनुसार सब कुछ कराता रहता है। किन्तु जिस प्रकार यही मानव अपनी उन्नत आत्मा से प्रभु के दर्शन कर लेता है उसी प्रकार इतिहास अपनी वास्तविकता खोता नहीं है। करोडो वर्ष पुराने वेद नहीं बदले छोटे मोटे इतिहास ही बदलते हैं या लुप्त भी हो जाते हैं। हॉ, किस संस्कृति के किस इतिहासकार ने कौन सा इतिहास लिखा है, उस पर उसके देश काल और मानसिकता का प्रभाव अवश्य पडता है। साथ ही यह भी कि वह बिका हुआ इतिहासवेत्ता तो नहीं है। तब भी आत्मा की तरह इतिहास की वास्तविकता नष्ट होती हो यह शंकास्पद ही है। इस संदर्भ में प्रश्नोत्तर में दो दोहे उद्धृत है—

प्रश्न—कहा न अबला कर सके,कहा न सिन्धु समाय। कहा न पावक में जरैं,कहा काल नहीं खाय।।

उत्तर— सुत नहीं अबला करि सकै, मन नहीं सिन्धु समाय। सत्य न पावक में जरैं,नाम काल नहीं खाय।।

कुल मिलाकर किंवदन्ती के अनुसार राम कृष्ण का अस्तित्व स्वीकार करके अपनी धारणा को पुष्ट करते हैं विचार बीते अनन्तकाल के अस्तित्व पर पर्दा डालता लगता है जो संगत नहीं है। जहॉ तक मान्यता का प्रश्न है अहिंसा को आंख बन्द कर मानने वाले बुद्ध को मानते है और कुछ उनकी विचारधारा को आज तक गिरावट का कारण मानते है। अन्यान्य मान्यताओं से इतिहास निरपेक्ष रहता है। इस प्रकार बुद्ध का इतिहास भ्रामक नहीं है, विचारधारा भ्रामक हो सकती है।

आगे चलकर यह विचार अस्पष्ट सा लगा है कि कलियुग का अंतिम चरण समाप्त होने तथा युग परिवर्तन के लक्षण सारी दुनिया में दिखने शुरु हो गए हैं। ज्ञात हो कि कलियुग की आयु सबसे कम होते हुए भी साढे चार लाख वर्ष बताई गई है तथा अभी केवल 5500 वर्ष व्यतीत हुए है।इस परिप्रेक्ष्य में युग के महान वैज्ञानिक आइंस्टीन की बात याद आती है और उचित लगती है। उन्होने कहा था कि तीसरा विश्वयुद्ध नहीं होगा। यदि तीसरा विश्वयुद्ध हुआ तो उसके बाद लोग लाठियों और डण्डो से लडेंगे। तात्पर्य यह कि तीसरा विश्वयुद्ध हुआ तो इतना विध्वंश होगा कि वह विश्व की पूरी सभ्यता को निगल जायेगा और अन्ध युग का पुनर्जन्म होगा। उस युग में से सतयुग में लौटने में कलियुग का शेष भाग निकल जायेगा।

जहॉ तक आतंकवाद का प्रश्न हैं जो हिन्दू आतंकवाद का पक्ष लेते है वे ज्यादा खतरनाक हैं। हाल में जो आतंकवादी सैफुल्लाह लखनउ में मार गिराया गया। जिसे आतंकवादी मानते हुए उसके पिता ने उसकी लाश स्वीकार नहीं की, उसके लिए दिग्विजय सिंह जैसे लोग कहते है कि पहले यह प्रमाणित करना चाहिये था कि वह आतंकवादी था।

उत्तरः— आपने लिखा कि समय भविष्य में सब कुछ कराता है इससे मैं सहमत नहीं । मेरे विचार से मनुष्य की शक्ति असीम है और वह अपनी क्षमतानुसार समय से सब कुछ करा सकता है। यदि नहीं करा पाता है तो वह उसकी क्षमता में कमी है और कभी कभी परिस्थितियां भी भिन्न हो जाती है । मैं इस बात से भी सहमत नहीं हूॅ कि वर्तमान में कोई भी गणना यह बता सके कि भविष्य में मानव स्वभाव क्या होगा तथा परिस्थितियां किस दिशा में कब करवट लेंगी। मैंने तो वर्तमान का आकलन करके भविष्य का आकलन व्यक्त किया है, न कि किसी अन्य की , किसी काल गणना के आधार पर मेरे अपने विचार है अपने तरीके है। स्वाभाविक है आपके विचार भिन्न हो सकते है। मैने भी संभावना का ही आकलन व्यक्त किया है किसी भविष्य वक्ता के रुप में नहीं। मैं अब भी मानता हूॅ कि दुनिया धीरे धीरे ठीक दिशा में परिवर्तन की ओर बढ रही है। मैं नहीं

मानता कि जो कुछ आइस्टीन ने कह दिया वह अंतिम रुप से घटित होगा ही। हम आप चाहेंगे तो ऐसी भविष्यवाणियों को असत्य सिद्ध कर सकते है। अभी महिने भर पहले ही किसी विद्वान ने भविष्यवाणी की थी कि मई 17 में विश्वयुद्ध शुरु हो जायेगा। ऐसे ऐसे भविष्यवक्ता आते ही रहते है इसलिए इन सबको महत्वपूर्ण मानना उचित नहीं।